National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2016; 1(4): 12-14
© 2016 NJHSR
www.sanskritarticle.com
Received: 27-01-2016
Accepted: 28-01-2016

डॉ. अरविन्द कुमार
सहायक आचार्य , साहित्य विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, कटवारिया सराय,
नईदिल्ली-110016

Correspondence:
डॉ. अरविन्द कुमार
सहायक आचार्य , साहित्य विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, कटवारिया सराय,
नईदिल्ली-110016

महाकवि कालिदास का सौन्दर्य प्रेम

डॉ. अरविन्द कुमार

सौन्दर्य और प्रेम का चित्रण संसार के सभी उत्कृष्ट कवियों ने किया हैं, फिर भी कालिदास ने सौन्दर्य और प्रेम के वर्णन में अपनी जिस प्रतिभा का परिचय दिया है,वह श्रृंगार- रस के कवियों में सर्वश्रेष्ट हैं। कालिदास की दृष्टि में सौन्दर्य को ब्राह्य साधनो की अपेक्षा नहीं होती[1] बल्कि वास्तविक सौन्दर्य सभी अवस्थाओं में मनोरम एवं रमणीय होता हैं।

' अहो सर्वास्ववस्थासु रमणीयत्वमाकृतिविशेषाणाम् '।

कालिदास का मत है कि समस्त दृश्य प्रकृति में जो सौन्दर्य या रमणीयता फैली हुई है,मानवीय लावण्य उसी का अंगभूत है। इसलिए वे स्त्री- सौन्दर्य की तुलना प्रकृति की लताओं और पुष्पों से करते हैं–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनगेषु संनद्धम्।।[2]

'शकुन्तला का अधर कोमल किसलय के समान रक्तवर्ण हैं। उसकी सुकुमार भुजाएँ लता की कोमल शाखाओं के समान हैं। उसके अंगो में यौवन (उरोज) खिले हुए पुष्प के समान आकर्षक हैं।' जिस अनुपम सौन्दर्य को अलंकृत करने के स्थान पर आभूषण स्वयं उससे अलंकृत होते है।[3]
प्रकृति के पुष्प उस सौन्दर्य की शोभा में भी अभिवृद्धि अवश्य करते हैं तभी तो अलका की रमणियां हाथ में लीलाकमल, केश- पाश में कुन्दकली, मुख पर लोध्र- पुष्प का पराग, कानों में सुन्दर शिरीष- पुष्प और सिर की माँग में कदम्ब पुष्प धारण किया करती थीं। कालिदास के अनुसार आकृति की सुन्दरता और हृदय की वक्रता दोनों साथ साथ नहीं रह सकतीं –

' नतादृशा आकृतिविशेषागुणविरोधिनो भवन्ति। '

रमणिय - रूप के वर्णन में कालिदास अद्वितीय है। निम्नलिखित पद में पार्वती की मुस्कराहट का क्या ही मनोरम वर्णन हैं–

पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यान्मुक्ताफलं वा स्फुटावेद्रुमस्थम्।
ततोऽनुकुर्याद्विशदस्य तस्यास्तामौवटपर्यस्तलरूचः स्मितस्य।।[4]

यदि जूही की कलियाँ चुनकर अरूण- वर्ण के कोमल किंसलियों पर सजा दी जाये, अथवा लाल मूँगो पर मोतियो के दाने तरतीब से बैठा दिये जायें, तब कहीं जाकर पार्वती के अरूण अधरों पर खेलने वाली मुस्कराहट की उपमा दी जा सकती हॉ अन्यथा नहीं। कालिदास ने मानव सौन्दर्य का ही वर्णन नही किया,पशु सौन्दर्य का भी उन्होंने भव्य और हृदय ग्राही चित्रण किया हैं–

ग्रीवामंगभिरामं मुहरनुपतति स्यन्दने वद्धदृष्टिः
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम।
दर्भैरर्धावलीदैः श्रमविकृतमुखभ्रांशिभिः कीर्णवर्त्मो
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यो प्रयाति।।[5]

यह मृग कैसे मनोहर ढंग से अपनी गर्दन मोड.- मोड.कर पीछे वेगा से बढने वाले इस रथ को बार- बार देखता जा रहा है। कहीं बाण आकर चुभ न जाये इस भय से अपने शरीर के पिछले हिस्से को समेटकर शरीर के अगले हिस्से में मानो घुसा जा रहा है थकावट के कारण हाँफने से इसके खुले मुख से अधचढाई घास गिरती जा रही है। इसकी लम्बी- लम्बी छलाँगो से ऐसा प्रतीत होता है कि यह हवा में तो अधिक और पृथ्वी पर कम चल रहा हैं।
कलिदास की दृष्टि में नारी केवल उपयोग की वस्तु नहीं है। वह गृहिणी है, सचिव है, सखी है और समस्त ललित कलाओं में निघणात गृहस्वामिनी हैं। कण्व के मुख से उन्होने परिवार को भूषण अथवा दूषण बनानेवाली स्त्रियो का वर्णन कराया हैं–

शूश्रूषस्व गुरून् कुरू प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतिर्य गमः।
भूमिष्ठं मव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं वामाः कुलस्याधयः।।[6]

तुम गुरूजानो की सेवा करना सौतो के साथ प्रिय सखियों के सदृश व्यवहार करना, पति के नाराज होने पर भी क्रोध कारण विरूद्ध आचरण न करना, परिजनो के प्रति उदार भाव रखना और एश्वर्य का गर्व कदापि न करना। स्त्रियां ऐसे आचरण से ही गृहिणी पद पाती हैं। इसके विरूद्ध आचरण करने वाली स्त्रियां कुल को रोग की तरह कष्ट पहुँचाने वाली होती हैं।
कालीदास के अनुसार सुन्दर शरीर का सौन्दर्य ही स्त्रियों का परम गौरव और चरम सौन्दर्य नहीं है। ' इसलिए निनिन्द रूपं हृदयेन पार्वती ', पार्वती ने मन ही मन अपने रूप की निदा की, ' इयेष सा कर्तुमवन्ध्वरूपताम् ' उसने अपने रूप को सफल बनाने की चेष्टा की। कालिदास ने सौन्दर्य परिणती प्रेम में मानी है– प्रियेषु सौभाग्य फला हि चारूता। उन्होंने प्रेम का आदर्श बहुत ऊँचा माना है। काम का कत्तव्य से विरोध नही होना चाहिएँ यह उनकी सारी कृतियां घोषित कर रही हैं। शिव अर्थात् मंगल का विरोधी काम भस्मावशेष कर दिया जाता है। कालिदास ने प्रेम का मूलभूत कारण पूर्वजन्म का संस्कार माना है–

रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्
पयुंत्सुकीभवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्व
भावस्थिराणि जननान्तरसौहृदानि।।[7]

सुन्दर वस्तुओं को देखकर तथा मधुर शब्दो को सुनकर सुखी मनुष्य भी उत्कंठित हो जाता है। इसका कारण यह है कि वह किसी पूर्व जन्म में होने वाली मैत्री का अज्ञात भाव से स्मरण करने लगता हैं । मन बिना किसी कारण के उस सौहार्द की और चला जाता हैं। ' मनो हि जन्मान्तर संज्ञितज्ञम् ' कहकर कालिदास ने रधुवंश में इसी सिद्धान्त को पुनः प्रतिपादित किया हैं।[8] प्रेम की इतिश्री इसी जन्म में नहीं हो जाती। परित्यकता सीता कहती है–

' भूयो यथा में जननान्तरेऽपि त्वमेव भत्ता न च विप्रयोगः। '

प्रेमी- प्रमिका के मधुर सम्बन्ध का कालिदास ने बडी सहृदयता से चित्रण किया है। पर प्रिया के विरह से बढ़कर संसार में और कोई उग्रतर दैव- दुर्विपाक नहीं हो सकता। विरही के लिए शीतल चन्द्रमा आग का गोला और उसकी किरणें वज्र के बाण बन जाती हैं –

त्व कुसुमरत्वं शीतरश्मित्वमिन्दोद्वयमिदमयथार्थं दृश्यते मद्विधेषु।
विसृजति हिमगर्मैरग्निमिन्दुर्मखैस्त्वमपि कुसुमबाणान् वज्रसारीकरोषि।।[9]

कालिदास ने अपने नाटकों में स्त्रियों के प्रथम प्रेम तथा पुरूषों के अपर प्रेम का दिग्दर्शन कराया हैं। इससे उनका अभिप्राय यह है कि स्त्रियों में प्रेम की कोमलता स्वभाविक रूप से विद्यमान रहती हैॉ किन्तु पुरूषो में उसका प्रादुर्भाव वासना के वेग के शान्त होने पर होता हैं। कालिदास कहते हैं कि स्त्री में जब प्रेम की उद्भूति होती है, तब वह उसे शब्दो द्वारा नही बल्कि सुकुमार हावों द्वारा व्यक्त करती हैं–
' स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु '। प्रेम परवश किन्तु संकोचशील शकुन्तला के उदीयमान प्रेम का मधुर दृश्य –

दर्भाङ्कुरेण चरणःक्षत इत्यकाण्डे तन्वी स्थिता कतिचिदेव पदानि गत्वा।
आसीद्विवृत्तवदना च विमोचयन्ती शाखासु वल्कलम सक्तमपि द्रुमाणाम् ।।[10]

अवसर न होने पर भी पैर में कुश, काँटा लग जाने का बहाना करके, वह सुन्दरी कुछ दूर जाकर ठिठक गई और झाड़ी की शाखा में वत्कल- वस्त्र न फँसने पर भी उसको छुड़ाने के बहाने वह मुझे बार- बार मुडकर देखने लगी।
जिस प्रेम में कोई बन्धन नहीं, कोई नियम नहीं, जो प्रेम अकस्मात् नर- नारी को मोहित करके संयम दुर्ग के प्राचीर के ऊपर अपनी जय- पताका को गाड़ता है,उस प्रेम की शक्ति को कालिदास ने स्वीकार किया है, किन्तु उसके हाथ आत्म समर्पण नही कर दिया। उन्होंने दिखलाया है कि जो असंगत प्रेम- संभोग हम लोगों को अपने अधिकार में कर लेता हैॉ वह स्वाभिशाप से खण्डित ऋषि- शाप से प्रतिहत और देव- रोष से भस्म हो जाता है। दुष्यन्त और शकुन्तला का बन्धन- विहिन गोपन- मिलन चिरकाल तक शाप के अन्धकार में लीन रहा। शकुन्तला को आतिथ्य धर्म का विचार नही रहा, वह दुष्यन्त के ही ध्यान में मग्न रही। उस समय शकुन्तला के प्रेम का मंगल- भाव मिट गया। दुर्वासा के शाप और शकुन्तला के प्रत्यारण्यान द्वारा कवि ने यह सिद्ध किया है कि जो उन्मत्त प्रेम अपने प्रेमपात्र को छोड. और किसी की कुछ भी परवाह नहीं करता, उसके विरूद्ध सारा संसार हो जाता है। इसी से वह प्रेम थोडे. ही दिनों में दुर्भर हो उठता हैं। यह स्मरण रखना चाहिए कि कालिदास ने भ्रमर- वृति का पक्ष नही लिया है, प्रत्युत दाम्पत्य- प्रेम को ही महत्व दिया है। पर स्त्री की ओर दृष्टिपात करना भी वे अनुचित समझते है। दुष्यन्त कहते हैं–

कुमुदान्येव शशांकरू सविता बोधयति पंकजान्येव।
बशिनां हि परपरिग्रहसंश्लेषपराङ्मुखी वृत्तिः।।[11]

चन्द्रमा केवल कुमुदों को तथा सूर्य केवल कमलों को विकसित करता है। संयमी पुरूषो का मन परस्त्री- प्रेम से सर्वथा विमुख रहता है। ' कुमारसंम्भव ' के पाँचवे सर्ग में कालिदास ने कहा है कि प्रेम का ज्वार लोकापवाद की परवाह नहीं करता– ' न कामवत्तिवर्चनीयमीक्षते '। इसका अर्थ यह नहीं कि अमर्यादित प्रेम का समर्थन करते हैं। उनके नाटकों का रूमनीय काव्य- सौन्दर्य किसी वीभत्स घटना, आत्यन्तिक आवेश अथवा अस्वाभाविक व्यापार से आक्रान्त नहीं होता। कालिदास के अनुसार प्रणय की सार्थकता विवाह में और विवाह की सार्थकता सन्तानोत्पत्ति के मांगलिक व्यापार में हैं। समूचा ' कुमारसम्भव' काव्य कुमार- जन्म

स्वरूप महाव्यापार की उपयुक्त भूमिका है कामदेव के वाण प्रहार धैर्य नष्ट होकर जो मिलन होता है, वह पुत्र जन्म के योग्य नहीं है। वह मिलन परस्पर की ही कामना करता है, पुत्र की कामना नहीं करता। इसी से कवि ने कामदेव को भस्म कराकर पार्वती द्वारा तपस्या कराई है। कुमार- जन्म की महिमा क्या है, यही स्पष्ट करने के लिए कवि ने कामदेव की रूद्र- रोषानल मे आहुति देकर अनाथा रति का करूण क्रन्दन कराया है। शाकुन्तल में भी प्रथम अंक में प्रेयसी के साथ दुष्यन्त का व्यर्थ- प्रणय दिखाकर अंतिम अंक के भरत- जननी के साथ उसके सार्थक मिलन को अंकित किया हैं।

संदर्भग्रन्थ –

1- शा॰- १/१८
2- शा॰- १/२०
3- आभरणस्याभरणं प्रसाधनविधेः प्रसाधन विशेषः।
उपमानस्यापि सखे प्रत्युपमानं वपुस्तस्या।।– विक्रमोर्वशीय- ०२/३
4- कु॰- ०१/४४
5- शा॰- १/०६
6- शा॰- ०४/१८
7- शा॰- ०५/२
8- रधुवंश- ०७/१५
9- शा॰- ०३/३
10- शा॰- ०२/१२